उत्पीड़ित लोकतंत्र

अप्रैल , 1918 में मोहनदास करमचंद गांधी नामक एक व्यक्ति को ब्रिटिश हुकुमत ने गिरफ्तार किया और बिहार के चंपारण में ब्रिटिश उप-विभागीय अधिकारी के सामने पेश किया गया। न्यायाधीश ने गांधी को चंपारण छोड़ने के लिए कहा। यह भी कहा कि यदि आप जिले को छोड़ देते हैं , और वापस न लौटने का वादा करते हैं , तो आपके खिलाफ मामला वापस ले लिया जाएगा। गांधी ने मना कर दिया। इस पर न्यायाधीश ने उसे सौ रुपये की जमानत पर रिहा करने का प्रस्ताव रखा। गांधी ने जमानत देने से इंकार कर दिया। उस रात उन्हें न्यायाधीश के व्यक्तिगत मुचलके पर रिहा किया गया।

शक्ति या सत्ता के समक्ष सच बोलने की क्षमता भारत की एक परंपरा है। लेकिन यह भी सच है कि संतों को ऐसी वीरता दिखा जाना ज्यादा आसान होता है। उनके पास खोने के लिए कुछ विशेष नहीं होता। उनके सत्य की आग डराने , धमकाने और जीवन का डर दिखाने से शांत नहीं होती। साधारण लोगों को तो परिणामों के बारे में सोचकर कदम आगे बढ़ाना होता है। वर्तमान के लोकतंत्रों में भी इस बात का विशेष ध्यान रखा जाना चाहिए कि सरकार से उलझना ठीक नहीं है।

सरकार के पास प्रताड़ित करने की शक्ति होती है। यह एक ऐसा भय है, जिसे हर व्यक्ति के अंदर भर दिया जाता है। उसे लगने लगता है कि वह अलग-थलग है , और सरकार की दया पर जीवित है। अगर पीड़ित व्यक्ति एकजुट हो जाते हैं , तो हंगामा हो सकता है , न्यायिक अभियोग लगाए जा सकते हैं , 'अवांछनीय' मीडिया को या सार्वजनिक प्रतिक्रिया को आमंत्रित किया जा सकता है।

इससे बचने के लिए एक चाल चली जाती है। सरकार की शक्तियों को किसी आपातकाल के आवरण में ढंककर थोपा जाता है। कानून के दायरे में रहकर इस प्रकार का धमकाना , सभी स्तरों पर सफल भी हो जाता है।

ऐसा ही कुछ आज हमारे देश में हो रहा है। गैरकानूनी गतिविधियां (रोकथाम) अधिनियम (यू ए पी ए) , राष्ट्रीय सुरक्षा अधिनियम (एन एस ए) या सार्वजनिक सुरक्षा अधिनियम (पी एस ए) जैसे कानूनों के बढ़ते दुरूपयोग ने सरकार को एकतरफा रूप से किसी को भी 'आतंकवादी' घोषित करने या मनमाने ढंग से गिरफ्तार करने का अधिकार दे दिया है। प्रवर्तन निदेशालय और आयकर विभाग , विरोध व्यक्त करने वालों की जांच करने में माहिर हो गए हैं।

अचानक ही कहीं राष्ट्र के विरूद्ध षड्यंत्र प्रकट हो जाते हैं। सूचना के अधिकार जैसे पारदर्शिता कानून कमजोर हो चुके हैं। सामाजिक संस्थाएं कानूनी दबाव में हैं। दोस्ताना मीडिया को नित नए रहस्य प्रसारित करने को दे दिए जाते हैं। इसके अलावा एक ट्रोल-सेना हमेशा तैयार रहती है , जो किसी के निर्दोष साबित होने तक उसकी प्रतिष्ठा की धज्जियां उड़ा चुकी होती है।

यह समझने का समय आ चुका है कि लोकतांत्रिक देशों के पास भी अलोकतांत्रिक तरीके से व्यवहार करने की अवशिष्ट शक्तियां होती हैं। सही मायने में , लोकतांत्रिक सरकारें इस प्रकार की शक्तियों के इस्तेमाल से बचती हैं। लेकिन जो लोग बचने के इच्छुक नहीं होते , वे अनुरूपता सुनिश्चित करने के लिए बड़ी सफलता के साथ उनका लाभ उठा सकते हैं। इस प्रकार का संदेश शक्तिशाली लोगों तक भी आसानी से पहुँचा दिया जाता है। हाल ही में कुछ फिल्मी हस्तियों द्वारा किए गए सरकार के विरोध और उसके बाद उसके गुणगान से उपरोक्त तथ्य का उदाहरण भी मिलता है।

इस प्रकार के 'समझौते' जीवन के हर क्षेत्र में देखे जा रहे हैं। इस चक्की में निर्धन और मध्य वर्ग तो पिस ही रहा है, अमीर वर्ग भी इससे अछूता नहीं है।

ऐसे मामलों में लोगों को केवल न्यायपालिका का सहारा होता है। परंतु हमारे देश में न्याय बहुत देर से मिलता है। जिस सरकार के कोई सिद्धांत ही न हो , उसे संविधान द्वारा दी गई स्वतंत्रता को खत्म करने में कितना समय लगेगा ? उसका लक्ष्य तो एक आज्ञाकारी राष्ट्र है। ऐसी अवस्था में जैन , बुद्ध और गांधी के सिद्धांतों को कैसे पसंद किया जा सकता है।

इस प्रकार के राष्ट्र का समाज घोर सत्तावादी होता जाता है , और यह बहुत खतरनाक स्थिति होती है। सरकार की जोर-जबरदस्ती या उत्पीड़न का एक सफल कृत्य दर्जनों ऐसे मामलों को बढ़ावा देता है। अंततः , लोकतांत्रिक प्रशासन के ताने-बाने को लगातार खतरा बना हुआ है। नागरिकों को ही यह तय करना होगा कि उन्हें किस हद तक समझौता करना है , और कब उन्हें एकजुट होने की जरूरत है।

'द टाइम्स ऑफ इंडिया' , में प्रकाशित पवन के वर्मा के लेख पर आधारित। 12 अक्टूबर , 2020